P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-4* (Part-1) December- 2018
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

''मानवाधिकार के परिप्रेक्ष्य में तुलसी कृत रामचरितमानस''

राजेश शर्मा
व्याख्याता,
हिन्दी विभाग,
विश्वविद्यालय का नाम,
झालावाड़, राजस्थान

सारांश

मानव जीवन इन्सानियत से गौरवान्वित होता है, वहीं मानवता से युक्त व्यवहार उसका अधिकार है। उसे ही वर्तमान में 'मानवाधिकार की संज्ञा से अभिहित किया गया है। परन्तु बिना कर्तव्यों के मात्र अधिकारों की कल्पना हास्यास्पद ही कही जायेगी, कारण कि एक व्यक्ति का कर्तव्य दूसरे का अधिकार है। अतः प्रत्येक व्यक्ति का लक्ष्य अपना कर्तव्य होना चाहिए। तुलसी कृत' रामचरितमानस' इसी वैचारिक धरातल पर अवस्थित है। जिसके माध्यम से हम श्रेष्ठ समाज की संरचना में प्रवृत्त हो सकते हैं।

मुख्य शब्द : मानवाधिकार, रामचरितमानस, तुलसीदास रामचन्द्र।

प्रस्तावना

किसी भी विकसित समाज में मानव को सम्मान और सुरक्षित जीवन जीने के लिए कुछ अधिकारों की आवश्यकता होती है, वे ही मूल–भूत अधिकार मानवाधिकारों के नाम से जाने जाते हैं। भारतीय मेधा इन्ही अधिकारों की नींव पर अवस्थित है। तुलसी के नायक रामचन्द्र का सम्पूर्ण जीवन मानव को उसकी गरिमा लौटान, उसे मनुष्य के रूप में आदर–भाव से स्वीकारने की कथा है। चाहे केवट हो चाहे विभीषण या फिर मृत्यु के समीप अवस्थित रावण हो क्यों न हो वह भी मानवता का उल्लंघन नहीं करते। उनका एक पत्नीव्रती होना स्त्रीजाति के अधिकारों को रेखांकित करने जैसा कार्य ही था जिसे उन्होने मौन रहकर जीवन के माध्यम से संसार के समक्ष प्रकट किया। वहीं बाली का वध शूर्पनखा के प्रति उपेक्षा को इनके द्वारा किये गये समाज विरोधी कृत्य के विरोध के रूप में देखा जा सकता है। 'बाली' के यह प्रश्न करनेपर कि तुमने मुझे क्यों मारा? व्यर्थ ही। मैने तुम्हारा क्या अपराध किया? राम जवाब देते है।

पुत्रवधु भगिनी सुत नारी,
सुनु सठ कन्या सम ऐ चारी।
इनहिं कुदृष्टि विलोकत जोही,
ताहि बधे कछु पाप न होही।। (मानस)

इसी प्रकार जब राम को पता चलता है कि उनका राज्यभिषेक होने वाला है तब उनकी मानवता विषयक उदारता के दर्शन होते हैं, और वे सोचते हैं कि सभी भाईयों को छोड़कर केवल मुझे राज्य देना कुछ ठीक नहीं है, राज्य पर अधिकार तो सभी का है–

जनमें एक संग सब भाई भोजन सयन केलि लरिकाई।।
करन बेध, उपबीत बिबाहा, संग संग सब भये उछाहा।।
बिमल बंस यह अनुचित एकू। बंधु बिहाई बड़ेहि अभिषेकू।।
(मानस)

श्रीराम के मुख से यह कहलवाना कि यह परम्परा अनुचित है कि भाइयों को छोड़ कर बड़े को राज्य देना यह उचित नहीं है एक क्रान्तिकारी सोच है तुलसी ने समाज को बहुत ही सूक्ष्म तरीके से देखा था और उन्होने पाया कि उस समय के साम्राज्य विशेष रूप से मुगल साम्राज्य, गुलामवंश केवल राज्य की छीना झपटी में ही नष्ट हो गये और विनाश का कारण परिवार ही रहे । औरंगजेब का अपने भाइयों के प्रति जघन्य कृत्य इसका उदाहरण रहा है। ऐसी परिस्थिति में तुलसी जैसे महाकवि का भावी राजा के माध्यम से यह सोच, बहुत अद्भुत और हृदय स्पर्शी लगती है क्योंकि छोटे भाइयों को भी राज्यपाने का अधिकार है। वे कहते कुछ नहीं परन्तु अन्य राम कथाओं में हम पाते है कि राम राज्य मिलने के पश्चात् अपने भाइयों और उनकी सन्तानों में राज्य का विभाजन करते हैं। अन्यथा राज्य उनकी सन्तान लव–कुश के पास बल्कि उनके बड़े पुत्र के पास ही रह जाता।

मानवाधिकार की बात वर्तमान युग में बहुत जोर शोर से की जाती हैं परन्तु उनकी सहज उपलब्धि मानवाधिकारों के अनुसार इन्सान की जिन्दगी के

लिये वैसी सोच संस्कार होने आवश्यक हैं। आज हमारे समाज में स्त्रियों के अधिकार है, रोजगार के अधिकार है, दलितों के अधिकार हैं लेकिन उसके बाद भी स्त्रियां अपने घरों और सड़को पर कितनी सुरक्षित हैं? आये दिन निर्भया जैसे काण्ड हो रहे हैं बल्कि अचम्भा तो यह है कि नित्यप्रति मानवाधिकारों की बात होती है और छः माह की बच्ची के साथ बलात्कार की खबरें आती हैं। वृद्धों के साथ नृशंस व्यवहार की खबरों से लगता है कि हम किसी और ही समाज में जी रहे हैं, मानव समाज तो यह कदापि नहीं है।

एक ओर स्त्रियों के अपने अधिकार हैं वही समाज के कुछ व्यवहारिक तौर तरीके हैं जिन पर चलकर सुख–शान्ति का जीवन जिया जा सकता है लेकिन यह समझदारी है किन्तु इसे मानना न मानना व्यक्ति की निजी सोच है, दूसरे के निजत्व का सम्मान करने वाले हित–अनहित समझाते है कई बार परिस्थितियों से आगाह करते हैं किन्तु जबरदस्ती नहीं करते क्योंकि अंतिम निर्णय व्यक्ति का निजी होता है और निर्णय लेना उसका अधिकार है। हम मानस में देखते हैं कि शिव पार्वती को राम की परीक्षा लेने से मना करते हैं और विविध प्रकार से समझाते हैं, इसी प्रकार उन्हे पिता के घर होने वाले यज्ञ में जाने से भी रोकने का प्रयास करते हैः वे कहते हैं कि जहां विरोध हो वहां बिना बुलाये नहीं जाना चाहिये। जब वह नहीं मानती तो कुछ गणों के साथ उन्हें भेज देते हैं। इसी प्रकार सीता को वन में जाने से रोकने के लिये सभी परिजनों ने समझाया, स्वयं राम ने समझाया वन की परिस्थितियों का वर्णन किया लेकिन जब नहीं मानी तो उनकी इच्छा का सम्मान करते हुए उन्हें वन में साथ चलने की आनुमति दे दी जाती है। इसी प्रकार राजा दशरथ ने मृत्यु को गले लगया लिया लेकिन कैकेयी के वचनों का सम्मान किया।

'रामचरितमानस' विश्व का ऐसा श्रेष्ठ महाकाव्य है जिसमें स्त्री की अस्मिता, उसकी इच्छा का बड़ा सम्मान है। रावण राक्षसवंशी है किन्तु मेघनाद की युद्ध में हुई मृत्यु के पश्चात् जब मेघनाद की पत्नी रावण से मेघनाद के शव को लाने को अनुमति लेने जाती है, तब रावण अपने तरीके से अपनी पुत्र–वधु को समझाते हैं लेकिन उसके प्रबल आग्रह पर उसे रामादल में जाने की अनुमति दे देते हैं ओर बहुत समझाइश के बाद सती होने की भी। जबकि राक्षसवंश में ऐसी परम्परा नहीं थी लेकिन रावण अपनी पुत्र–वधु के निजत्व का सम्मान करते हैं। यहां तक कि रावण अपने शत्रु राम की पत्नी का हरण तो कर लाये किन्तु वे उससे किसी प्रकार को अभद्रता नहीं करते वरन उसे अशोक वाटिका में रखते हैं। यहाँ तक कि अपने छोटे भाई विभीषण को उसकी सोच के अनुसार जीवन जीने को स्वतंत्र कर देते हैं। तुलसी का रामचरितमानस मानवाधिकारों की कोरी बात ही नहीं करता वरन उन्हे जीता भी हैं। वे व्यक्ति की श्वांसों में समाये हुए हैं, उसके संस्कारों में रोम–रोम में यहाँ तक कि उस के रक्त में समाहित हैं वे इस तरह व्यक्ति की धड़कन में हैं कि वह उनके लिए अपने स्वार्थ, अपनी जिन्दगी, आराम यहां तक कि स्वर्ग तक को भूल जाता हैं। मानवाधिकारों की बात करना वास्तव में दूसरे के निजत्व को सम्मान देना है उसके अस्तित्व की स्वीकृति है। अहिल्या जो कि चन्द्रदेव के दुश्कृत्य एवं पति गौतम के श्राप के कारण पाषणवत् हो गई थी, सम्भव है इसके मध्य में समाज कि घोर उपेक्षा भी रही हो। ऐसे में राम का उनके आश्रम में जाना और उनका कैसा आत्मीय स्पर्श और मासूम व्यवहार रहा होगा कि उस वर्षो से पीड़ित, उपेक्षित पाषाणस्त्री पुनः नारीत्व के गौरव से भर उठती है। यह वास्तव में उस तिरस्कृत नारी को पुनः जीवन से भरदेना था। एक निष्पाप बालक का उस पाषाणी को पुनःमातृगौरव से आह्लादित कर देना था, जहां वह उस आत्मीय क्षण में श्राप को आशीष समझती है और मुक्त हो जाती है।

मानस के अनुशील से ज्ञात होता है कि रावण का राज्य भी इन अधिकारों से अछूता नहीं था। जब राम के दूत बनकर श्री हनुमान लंका सीता की खोज हेतु जाते हैं और रावण के पुत्र मेघनाद उन्हें बन्दी बनाकर रावण के दरबार में उपस्थित करते हैं उस समय का दृश्य मानवाधिकारों की एक सुन्दर झलक पेश करता है। रावण के यह पूछने पर कि तुमने अक्षय कुमार इत्यादि को क्यों मारा? तब वे कहते हैं कि जिसने मुझे मारा मैंने उसे मारा' तात्पर्य यह कि मैंने स्वयं की रक्षा (आत्मरक्षा) हेतु मारा, व्यर्थ नहीं मारा व्यक्ति को 'आत्मरक्षा' का अधिकार है। वे कहते हैं कि 'भूख लगी' इसलिए फल खाये व्यक्ति को क्षुधा पूर्ति' का भोजन का भी अधिकार है। इस से भी आगे बढ़कर कहते हैं कि प्रकृति ने प्रत्येक प्राणी को स्वाभाविक गुण– दोष दिये हैं उसी प्रकृति पदत्त प्रवृत्ति के कारण (कपि स्वभाव) मैंने वृक्ष तोड़े। हम सभी प्राणी अपनी प्रकृति के अधीन हैं। और जब रावण हनुमान जी को मृत्युदण्ड देने का आदेश देता है तो विभीषण उन्हें रोकते हुए कहते हैं 'दूत को मृत्युदण्ड देना नीति के विरूद्ध है।' तथा रावण मृत्यु दण्ड को रोक देता है। इससे पता लगता है कि उस समय में भी न केवल स्त्री–पुरूषों के वरन–दूतों के भी मानवाधिकार थे और समाज के सभी कार्य व्यवहार अस्मिता के सम्मान के अनुसार होते थे। हाँ इतना जरूर दिखाई देता है कि वर्तमान में हम अधिकारों की बात करते हैं किन्तु रामचरित मानस' में अपने कर्त्तव्यों की बात की गई है कि हमें क्या करना चाहिये, हमारा कर्त्तव्य क्या बनता हैं। परिवार समाज राज्य के सभी व्यक्ति अपने–अपने कर्त्तव्य की बात करते हैं उन कर्त्तव्यों के निर्वहन में चाहे उन्हें कितना ही दुःख उठाना पड़े, कैसी भी हानि क्यों न हो जाये किन्तु वे जीवन की सार्थकता अपने कर्त्तव्य की पूर्ति में ही महसूस करते थे। यदि हम अधिकारों की बात करेंगे तो कर्त्तव्य कौन पूरे करेगा, किन्तु हम अपनी दृष्टि अपने कर्त्तव्य कर्म पर रखेंगे तो हमें अपने अधिकार अपने आप प्राप्त होते चले जायेंगे। अतः समाज में अपने कर्त्तव्य पर ध्यान देने का परिवेश बनना चाहिये। भारत में धर्म की परिभाषा भी कर्त्तव्य का निर्वहन ही कही गई हैं।'' कर्त्तव्य करने से ही पुण्य प्राप्त होता है, स्वर्ग की प्राप्ति होती हैं। गीता में श्री कृष्ण अर्जुन को कर्म (कर्त्तव्य) करने का ही सन्देश देते हैं। क्योंकि अपने कर्त्तव्य के अनुसार कर्म करने से ही जीवन का सच्चा और सही परिप्रेक्ष्य परिलक्षित होता है। व्यक्ति के द्वारा दूसरे के अधिकारों का हनन संघर्ष की स्थितियां

उत्पन्न करता है। राम–रावण युद्ध और महाभारत के युद्ध के मध्य का कारण स्त्री की मर्यादा पर प्रहार ही तो रहा है।

अतः कहा जा सकता है कि 'तुलसी' को राम चरितमानस में मानवाधिकारों के सूत्र बहुत ही बारीकी से गुँथे हुए दिखाई देते हैं। दशरथ अपनी पत्नियों से पुत्र वधुओं को बहुत ही ममता पूर्वक रखने की बात करते हैं। वे कहते हैं कि बच्चियाँ नये–घर में आई है अतः उन्हें बहुत ही प्रेम से पलकों की छायाँ में रखो। इस प्रकार 'मानस' में बेटियों के साथ बहुओं का सम्मान भी सुरक्षित दिखाई देता है, उन्हें भी पुत्रीवत भरपूर स्नेह– सम्मान प्राप्त होता है। लेकिन मानस में पात्रों की दृष्टि अपने कर्त्तव्य कर्मो पर ही है न कि अपने अधिकारों पर। मानस में पात्र अपने कर्त्तव्यों के प्रति इतने समर्पित हैं कि उसके लिए अपने अधिकारों को त्यागने के लिए सदैव तत्पर रहते हैं। मानस से हमें यही सीख लेनी चाहिये कि हम अपने कर्तव्यारायण दृष्टि कोण को विकसित करें समाज में पुनः इस प्रकार का परिवेश बनाये जिससे व्यक्ति अपनी सीमा को पहचाने, शक्ति सम्पन्न होते हुए भी मनमानी न करें। कर्त्तव्य बोध को अपने संस्कारों में धारण करें। पिता जनक वन में अपनी पुत्री–दामाद से जब मिलने आये तो वे यह नहीं कहते हैं कि दशरथजी कैकयी ने अवध से बाहर निकाला तो तुम्हें मिथिला आजाना चाहिये था मै तुम्हें वहां का युवराज बना देता या तुम आराम से वहीं रहो। न वे अपनी पुत्री से कहते है कि तुम्हारा जंगल में क्या काम आराम से अपने घर आजाती या अब भी चलो। हाँ दशरथ जी जरूर कहते हैं कि तुम यहां आराम से रहो कभी–कभी तुम्हारा मन हो तो पिता के घर चली जाओ पर जंगल में मत जाओ। किन्तु पिता जनक अपनी पुत्री के कर्त्तव्य बोध का सम्मान करते हुए कहते हैं कि तुमने एक श्रेष्ठ पत्नीव्रता के रूप में अपने पति के साथ वन में आकर बहुत ही अच्छा निर्णय लिया उससे दोनों कुलों की कीर्ति में वृद्धि हुई है। 'पुत्री पवित्र किये कुल दोऊ'

मानवाधिकार समाज को मानवता से युक्त जिन्दगी मुहैया कराने का वचन देता है। लेकिन यह वचन तभी सत्य हो पाता है जब व्यक्ति संस्कारित हो देवत्व से युक्त हों अन्यथा तो देवता भी कामुकता, वासना और स्वार्थ के वशीभूत हो कर निकृष्ट कार्य करते देखे जा सकते हैं।

मानवाअधिकार उदार हृदय उन्नत चेतना और निस्स्वार्थ मनः स्थिति की उपज है। यही कारण है कि वाल्मीकि रामायण में राम अपने व्यक्ति रूप में पति के कर्तव्यों से अधिक प्रधानता अपने राजा के कर्त्तव्यों को देते हैं और प्रजा की इच्छा के लिए सीता का परित्याग जैसा मारक कदम उठाते हैं। भव–भूति के उत्तर राम चरित में माता के यह कहलाने पर कि राजा का राज्य का ध्यान भली भांति रखना तब वे कहते हैं कि राज्य की रक्षा के लिए मुझे यदि सीता का भी परित्याग करना पडे तो भी मैं करूंगा। उन्होंने समाज के लिए अपनी गर्भवती पत्नी को त्याग दिया। और आजीवन विरह व्यथा से पीड़ित रहे।

निष्कर्ष

राम का जीवन मानवता के रेखांकन का काव्य है, जिसमें सभी मुख्य पात्र दूसरे के अधिकारों के विषय में सोचते है, उसके अनुरूप जीवन जीते हैं जिसके परिणाम स्वरूप स्वयं का जीवन स्वतः ही खुशियों से भर उठता है। वाल्मीकि के राम को सोने की लंका से अधिक अपनी मातृभूमि अयोध्या प्रिय लगती है, उन्हे, चौदह वर्ष के वनवासी को लंका का राज्य नहीं लुभाता। वरन मातृभूमि की मिट्टी स्वर्ग से भी अधिक प्रिय लगती है। अब मातृभूमि के प्रति ऐसी भावनाएं सूक्ति वाक्यों तक सिमट गई है अन्यथा 'ब्रेन ड्रेन' की समस्या हो ही क्यों?

राम मर्यादा पुरूषोत्तम है उन्होंने धनुष कमजोर की रक्षा, उनके अधिकारों व सम्मान की रक्षा के लिए धारण किया था। यही उनकी अहिंसा है और इसे ही पराक्रम शीलता भी कहा जा सकता है। मानव की गरिमा के रक्षण के लिए उठाया गया अस्त्र वास्तविक अहिंसा के स्वरूप का रेखांकन है।

सन्दर्भ

1. रामचरित मानस (मूल मझला साइज) पृ. 356
2. रामचरित मानस (मूल मझला साइज) पृ. 185
3. मानवाधिकार और भारतीय संविधान ले. प्रदीप त्रिपाठी पृ. 15
4. रामचरित मानस (मूल मझला साइज) पृ. 44
5. प्रचलित कथा के अनुसार
6. मानवाधिकार और भारतीय संविधान ले. प्रदीप त्रिपाठी पृ. 28
7. अनच्छेद–3 प्रत्येक व्यक्ति को जीवन, स्वाधीनता और वैयक्ति सुरक्षा का अधिकार है।
8. रामचरित मानस (मूल मझला साइज) पृ. 380
9. श्रीमद् भगवद गीता (साधक संजीवनी) पृ. 103
10. रामचरित मानस (मूल मझला साइज) पृ. 299
11. उत्तर रामचरित ले0 भवभूति पृ. 22–23
    स्नेहं दयां च सौख्यम् च वा जानकीमपि।
    आराधनाय लोकस्य मुञ्चतोनास्ति मे व्यथा।। 12।।
12. वाल्मीकि रामायण, युद्ध काण्ड (6/124/17)
    मित्राणि धन धान्यानि प्रजानां सम्मतानिव।
    जननी जन्म भूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।।
    (This sloka is seen edition published by Hindi prachar press in 1930 by T.R. krishnacharya, editor and T.R. Vemkoba charya the publisher
    Net ज्ञान कोश (संदर्भ कोष)